भारत में सकारात्मक कार्यवाही

पिंकी पुनिया एवं ऋतेश भारद्वाज

Ikjk'k समानता का मुद्दा प्रत्येक राज्य में एक बहुत चुनौतीपूर्ण मुद्दा रहा है चाहे वह सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक समानता हो। लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित किसी भी राष्ट्र का प्राथमिक दायित्व विषमता को कम करना है, उदाहरण के तौर पर भारत में सकारात्मक भेदभाव की अवधारणा और संयुक्त राज्य अमेरिका में सकारात्मक कार्यवाही की अवधारणा का पालन किया जाता है। यद्यपि दोनों ही उपागम का उद्देश्य एक ही है लेकिन इनके माध्यम से अपनाई जाने वाली विधियां अलग-अलग हैं। सकारात्मक कार्यवाही या संरक्षणमूल्क भेदभाव का मुद्दा समानता के सिद्धांत के साथ जुड़ा हुआ है। समानता का सही अर्थ यह नहीं है कि सभी लोगों के साथ बिलकुल एक जैसा बर्ताव किया जाए। समानता का सही अर्थ है, एक जैसे लोगों के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए (Equality would imply that equals out to be treated alike in the respect in which they are equal)। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 16, और अनुच्छेद 17 साथ-साथ अनुच्छेद 340, 341, 342 और अन्य कई स्थानों पर सकारात्मक कार्यवाही को लागू करने का प्रयास किया गया है। इसी सकारात्मक कार्यवाही को जॉन रॉल्स ने भेदमूलक न्याय (Differential Justice) की संज्ञा दी थी। इस लेख में सकारात्मक कार्यवाही से संबंधित भारतीय संविधान में मौजूद प्रावधानों, सिद्धांतों और व्यावहारिक पहलुओं का अध्ययन करते हुए नरम और कठोर सकारात्मक कार्यवाही के प्रयासों की समीक्षा की गई है।

प्रस्तावना

समानता का सिद्धांत एक गतिशील सिद्धांत है जोकि प्रचलित भेदभाव को मिटाने के लिए सब लोगों को एक-जैसा सम्मान और अवसर प्रदान करने का समर्थन करता है। जब हम सामाजिक अधिकारों (सामाजिक न्याय) की मांग करते हैं तब हमारा अभिप्राय यह होता है कि समाज में विशेष वर्गों के परंपरागत विशेषाधिकारों (Traditional Privileges) को समाप्त कर दिया जाए और वंचित वर्गों को अन्य वर्गों के समान अपनी

योग्यता और परिश्रम के बल पर आवश्यक संपदा, सम्मान व शक्ति प्राप्त करने का उचित अवसर दिया जाए। दूसरे शब्दों में, किसी भी व्यक्ति को लिंग, जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र या रंग, इत्यादि के आधार पर उन्नति के अवसरों से वंचित ना रखा जाए क्योंकि इनमें से कोई भी तत्व भेदभाव का तर्कसंगत आधार (Logical Ground of Discrimination) प्रस्तुत नहीं करता। समानता का सिद्धांत निष्पक्षता पर बल देता है और यह मानकर चलता है कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति को आत्मविकास के लिए समान अवसर मिलने चाहिए। जब हम समान अवसरों की बात करते हैं तो उससे हमारा अभिप्राय होता है 'सभी के लिए पर्याप्त अवसर' (Appropriate opportunity for all)। समानता का अर्थ है मानवीय प्रतिष्ठा और अधिकारों की दृष्टि से सब समान है।

इस प्रकार समानता के सिद्धांत के कुछ मुख्य लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं:

(क) समानता का एक पहलू यह है कि किसी भी व्यक्ति को वंश, लिंग, जन्म, स्थान, राजनीतिक पद और धन के आधार पर कुछ लोगों को ऐसे विशेष अधिकार प्राप्त नहीं होंगे जिनसे दूसरे लोग वंचित हो। संक्षेप में, यह भेदभाव के तर्कशून्य आधार को समाप्त करने की मांग करता है परंतु योग्यता और परिश्रम के आधार पर भिन्न-भिन्न लोगों के लिए भिन्न-भिन्न पुरस्कार का विरोध नहीं करता।

(ख) समानता का दूसरा पहलू यह भी है कि सभी व्यक्तियों को आत्म विकास के समान अवसर सुलभ होने चाहिए। लास्की का भी कहना था कि लोगों की न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी हो जानी चाहिए इसके अतिरिक्त सभी को शिक्षा की सुविधाएं मिलें और किसी भी व्यक्ति की प्रतिभा का नाश नहीं होना चाहिए।

(ग) समानता का सिद्धांत विशेष सुविधाओं का विरोध करता है परंतु इसका मतलब यह नहीं है कि किसी व्यक्ति या वर्ग के लिए विशेष सुविधा ही ना जुटाई जाए। यदि सरकार दिव्यांगों के लिए कुछ खास तरह के स्कूल स्थापित करती है और उनकी शिक्षा पर जो खर्चा किया जाता है वह एक औसत बच्चे की शिक्षा पर किए जाने वाले खर्च से ज्यादा होता है। किंतु इसे हम अवसरों की असमानता नहीं कहेंगे क्योंकि सरकार द्वारा जो भेदभाव किया जा रहा है उसका उचित तर्कसंगत आधार है।

समानता के समर्थक अक्सर या सुझाव देते हैं की 'योग्यता के अनुसार आंबटन' (Distribution according to merit) से समाज में जो असंतुलन पैदा हो सकता है उसे संतुलित करने के लिए 'यथासंभव आवश्यकता के अनुसार आंबटन' (Distribution according to need) को भी अपनाना चाहिए। इससे समाज में संपत्ति, सम्मान और शक्ति का समतामूलक वितरण हो सकेगा जो समानता के सिद्धांत को विशेष रूप से

सार्थक करेगा। समतामूलक वितरण के संदर्भ में भी कुछ तथ्य सामने आते हैं जैसे, समाज के जो वर्ग शताब्दियों से दमन और शोषण का शिकार रहे हैं, वे मुक्त प्रतिस्पर्धा में अत्यंत उन्नत लोगों का मुकाबला करने में समर्थ नहीं होंगे। इन लोगों को समाज के दुर्लभ संसाधनों में से उचित हिस्सा दिलाने के लिए कुछ विशेष व्यवस्था करनी पड़ेगी। भारतीय समाज के बड़े हिस्से को कई शताब्दियों से केवल जन्म के आधार पर उच्च शिक्षा, उच्च व्यवसाय और सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के अवसरों से वंचित रखा गया था। इससे यह अनेक पिछड़ी जातियां और पिछड़े वर्ग अस्तित्व में आ गए। 19वीं शताब्दी के आरंभ और मध्य में, जब नई सामाजिक चेतना का उदय हुआ और अनेक समाज सुधारको ने इस व्यवस्था में निहित सामाजिक अन्याय के प्रति गहरी चिंता प्रकट की। जिसके उपरांत भारत की स्वाधीनता के पश्चात यह सामाजिक समरसता के लिए आवश्यक समझा गया कि सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के विकास के लिए कुछ विशेष व्यवस्था करनी होगी ताकि यह राष्ट्रीय जीवन में अपनी उपयुक्त भूमिका संभाल सके। इसका मतलब यह था कि इन वर्गों को अपनी-अपनी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधि संस्थाओं, सरकारी नौकरियों और शिक्षा के महत्वपूर्ण पाठ्यक्रमों में उपयुक्त प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिए। आप सभी को यह ज्ञात होगा की सभी लडकियों को दिल्ली विश्वविद्यालय में दाखिले के दौरान एक प्रतिशत की छूट दी जाती है जिसका आधार सकारात्मक समानता है अर्थात तर्कसंगत आधार पर स्त्रियों को शिक्षा के क्षेत्र में उनकी सहभागिता बढ़ाने के लिए यह सकारात्मक कार्यवाही (Affirmative Action) या संरक्षणमूलक भेदभाव (Protective Discrimination) की नीति अपनाई जाती है।

सकारात्मक कार्यवाहीः सिद्धांत एवं व्यवहार

इस प्रकार सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के हितों के संरक्षण के लिए अन्य वर्गों के साथ जो तालमेल या सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश की जाती है, उसे संरक्षणमूलक भेदभाव या सकारात्मक कार्यवाही कहा जाता है। भारत में सकारात्मक कार्यवाही का उद्देश्य है की समाज के विभिन्न समूहों के बीच संरचनात्मक असमानता को दूर किया जाए। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 'सामाजिक न्याय' के विचार को ध्यान में रखते हुए इसे सकारात्मक कार्यवाही के माध्यम से पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है। जिसमें केवल समान अवसर को देना या समतामूलक समाज का उद्देश्य ही शामिल नहीं है बल्कि समाज में उत्पन्न सामाजिक दरारों और खाइयों को समाप्त करना भी है जोकि सांझे समाज की जिम्मेदारी भी है। अमेरिकी राष्ट्रपति बी जॉनसन का मानना था कि सकारात्मक कार्यवाही या समतामूलक समाज के लिए समान अवसरों का दरवाजा खोल देना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि समान अवसर के तर्क को ज्यादा मजबूती से कायम करने की आवश्यकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में अश्वेत जातियों और स्त्रियों को विभिन्न नौकरियों और उच्च शिक्षा के

पाठ्यक्रमों में जैसे चिकित्सा और कानून के पाठ्यक्रमों में प्रवेश देते समय वरीयता दी जाती है। वहां वंचित वर्गों की पहचान करके उनके हित में जो विशेष कार्यवाही की जाती है उसे सकारात्मक कार्यवाही कहा जाता है। वास्तव में भारत में प्रचलित संरक्षणमूलक भेदभाव और अमेरिका में प्रचलित सकारात्मक कार्यवाही एक ही तर्क पर आधारित है। इन दोनों के अंतर्गत वंचित वर्गों को समुचित व उचित प्रतिनिधित्व देने के लिए सरकार द्वारा इनके लिए कुछ विशेष प्रयास किए जाते हैं और इस प्रयास को आलोचकों द्वारा 'विपरीत भेदभाव' (Reverse Discrimination) का मुद्दा कहा जाता है।

प्रोफेसर जेम्स जोंस, जूनियर ने सकारात्मक कार्यवाही को परिभाषित करते हुए कहा था कि यह एक निर्दिष्ट समूह या समूहों में उनकी सदस्यता के आधार पर व्यक्तियों को अवसर या अन्य लाभ प्रदान करता है। प्रोफेसर डेविड बेंजामिन ओपन हाइमर के अनुसार सकारात्मक कार्यवाही के क्रियान्वयन में पांच तरीके शामिल होते हैं जैसे कोटा, प्राथमिकताएं, स्व-अध्ययन, आउटरीच और परामर्श और भेदभाव विरोधी। प्रोफ़ेसर बेंजामिन ओपनहाइमर द्वारा वर्गीकृत परिभाषा के माध्यम से सकारात्मक कार्यवाही को दो भागों में विभाजित करके देखा जाता है जैसे कठिन सकारात्मक कार्यवाही (Hard Affirmative Action) और नरम सकारात्मक कार्यवाही। (Soft Affirmative Action)। कठिन सकारात्मक कार्यवाही में कोटा और प्राथमिकताएं शामिल है और नरम सकारात्मक कार्यवाही में आउटरीच कार्यक्रम, स्व-आंकलन विवरण और श्रम बाजार का विकास शामिल है। यहां पर यह बात ध्यान रखने योग्य है कि सकारात्मक कार्यवाही के विचार की उत्पत्ति वितरणमूल्क न्याय के सिद्धांत से हुई है। राजनीतिक सिद्धांत में हमें विभिन्न दार्शनिकों के मध्य न्याय और समानता की अवधारणा को लेकर कई मतभेद दिखाई देते हैं वे सभी समाज को आकार देने के लिए किसी-न-किसी प्रकार न्याय के वितरणकारी तंत्र का सुझाव देते हैं। वास्तव में न्याय का वितरणात्मक सिद्धांत कोई नया नहीं है। स्वयं अरस्तु ने वितरणात्मक न्याय की बात की थी और उनका मानना था कि न्याय दो प्रकार का होता है – पूर्ण न्याय और विशेष न्याय। अरस्तु विशेष न्याय को वितरणात्मक और सुधारात्मक न्याय में विभाजित करते हैं। अरस्तु का मानना था कि न्याय का वितरणात्मक सिद्धांत मानकीय सिद्धांतों पर आधारित है जोकि विशेष रूप से आर्थिक गतिविधियों के लाभों और बोझों के आवंटन को निर्देशित करने के लिए एक रूपरेखा तैयार करता है।

भारत में सकारात्मक कार्यवाही के कार्यक्रम की सारणी को मोटे तौर पर तीन व्यापक श्रेणियों में विभाजित करके देखा जा सकता हैः सर्वप्रथम विभिन्न प्रकार के आरक्षण हमारे देश में प्रचलित है जो मूल्यवान पदों और संसाधनों तक वंचित वर्ग की पहुंच को सुविधाजनक बनाते हैं जैसे विधानसभा में आरक्षण, लोकसभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण सहित सरकारी सेवाओं में आरक्षण और शैक्षिक संस्थानों में आरक्षण। दूसरे प्रकार के सुरक्षात्मक उपायों में भूमि आवंटन, आवास और अन्य दुर्लभ संसाधनों जैसे छात्रवृत्ति, अनुदान, ऋण, स्वास्थ्य

देखभाल, इत्यादि में सुरक्षात्मक उपायों के माध्यम से सकारात्मक कार्यवाही का क्रियान्वयन किया जाता है। तीसरे प्रकार के क्रियान्वयन में कुछ खास उपायों जैसे अस्पृश्यता, बंधुआ मजदूरी, सार्वजनिक स्थलों तक सभी लोगों की समान पहुंच को सुनिश्चित करना, इत्यादि अनेक विषमताओं के व्यवहार को दूर करने की कोशिश की गई है। अशोक आचार्य भी इसे तीन आधारों पर परिभाषित करते हैं जैसे आरक्षण की नीति, विशेष सहयोग तथा सुरक्षा की नीति। आरक्षण की नीति का अभिप्राय राजनीतिक और सरकारी नौकरी तथा शिक्षण संस्थानों में वंचित समुदाय को प्रतिनिधित्व देना है। विशेष सहयोग के माध्यम से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और महिला जैसे समूहों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं जिसमें स्कॉलरशिप, जमीन, घर का आवंटन, स्वास्थ्य सेवा और कानूनी मदद, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, ग्रामीण विकास कार्यक्रम इत्यादि शामिल है। सुरक्षा की दृष्टि से बंधुआ मजदूरी आदि सामाजिक कुरीतियों पर भी रोक लगाई जानी आवश्यक है और व्यक्ति को शोषण से सुरक्षा भी प्रदान की जानी चाहिए। इन तीनों कारको में राज्य की नैतिक वचनबद्धता भी शामिल है।

प्रोफेसर डेविड बेंजामिन ओपनहाइमर द्वारा प्रदान किए गए वर्गीकरण में, पहला प्रकार 'कठिन सकारात्मक कार्यवाही' का प्रतिनिधित्व करता है और दूसरा व तीसरा प्रकार 'नरम सकारात्मक कार्यवाही' के विशिष्ट मामलों को सम्मिलित करता है। भारतीय संविधान में राजनीतिक प्रतिनिधित्व के संदर्भ में सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से अनुच्छेद 330 में यह प्रावधान किया गया है कि विशेष राज्य में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात में सीटें लोकसभा में आरक्षित की गई हैं। वह राज्य जो मुख्य रूप से आदिवासी बहुल हैं उन्हें इस प्रावधान से बाहर रखा गया है। इससे पूर्व 1969 में संविधान के 23वें संशोधन की धारा 2 में नागालैंड के जनजातीय क्षेत्रों के संदर्भ में अनुच्छेद 330 के संचालन को बाहर रखा गया था, लेकिन अब 31वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा मेघालय, मिज़ोरम, अरूणाचल, प्रदेश राज्यों तक इसका विस्तार कर दिया गया है।

इसी प्रकार अनुच्छेद 332 के तहत राज्यों की विधानसभा में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में उस विशेष राज्य में उनकी आबादी के अनुपात में सीटें आरक्षित की गई है। यहां पर भी मेघालय, नागालैंड, मिज़ोरम और अरूणाचल प्रदेश राज्य को अनुच्छेद 332 के संचालन से बाहर रखा गया है, केवल इन राज्यों की प्रमुख जनजातीय आबादी के कारण। अनुच्छेद 331 और 333 एक ही तरीके से एंग्लो इंडियन समुदाय के सदस्यों के पक्ष में काम करते हैं। वर्ष 2021 में 104 संविधान संशोधन के माध्यम से लोकसभा में एंगलो इंडियन कम्युनिटी के प्रतिनिधित्व की जो व्यवस्था थी अब उसे समाप्त कर दिया गया है।

भारतीय संविधान में समानता के मौलिक अधिकार के संदर्भ में अनुच्छेद 15 (1)

और 15 (2) के अनुसार राज्य किसी भी नागरिक के साथ जन्म, स्थान, निवास, वंश, वर्ग, भाषा और लिंग के आधार पर भेदभाव की मनाही करता है। दूसरी ओर अनुच्छेद 15 (4) में कहा गया है कि राज्य को किसी भी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग की उन्नति के लिए कोई विशेष प्रावधान करने से नहीं रोका जा सकता है। भारत में अब तक शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण प्रदान करने के लिए अनुच्छेद 15 (4) का उपयोग विशेष रूप से किया गया है। भारतीय संविधान में सुरक्षात्मक भेदभाव (संरक्षणमूल्क भेदभाव) के उपाय के रूप में अनुच्छेद 16 (1) किसी भी सरकारी रोजगार या नियुक्ति के मामलों में सभी नागरिकों के लिए अवसरों की समानता की बात कही गई है और अनुच्छेद 16 (2) प्रावधान करता है कि कोई भी नागरिक के साथ धर्म, जाति, वंश, लिंग, जन्म स्थान, निवास इनमें से किसी भी आधार पर राज्य के अधीन किसी रोजगार में उनके साथ भेदभाव नहीं किया जाएगा। सरकारी सेवाओं में आरक्षण को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 16 (4) के तहत शामिल किया गया है। यह विशेष प्रावधान समानता के अधिकार के तहत आता है। अनुच्छेद 14 के तहत समानता के सामान्य अधिकार को प्रभावी बनाने के लिए, सविधान सभी नागरिकों को धर्म, जाति, भाषा और लिंग के आधार पर भेदभाव का प्रतिशोध करता है।

प्रोफेसर डेविड बेंजामिन ओपनहाइमर के मूल वर्गीकरण के आधार पर भारतीय संविधान के तहत सकारात्मक कार्यवाही कार्यक्रमों की पूरी श्रृंखला को 'कठोर' और 'नरम' कानून श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। संविधान की प्रस्तावना और चौथे भाग में सकारात्मक कार्यवाही का विवरण मिलता है। अनुच्छेद 330 से 334, 340 से 342 और 15 और 16 को कठिन कानून के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है क्योंकि यह कुछ कानूनी मापदंडों को निर्धारित करते हैं जिसके द्वारा विभिन्न ऐतिहासिक अन्याय और षोशण को दूर करने और क्षतिपूर्ति की मांग की गई है। इन वैधानिक प्रावधानों से स्पष्ट है कि भारतीय संविधान सकारात्मक कार्यवाही को सामाजिक राजनीतिक अधिकारों पर परिभाषित करता है। वहीं दूसरी ओर, नरम सकारात्मक कार्यवाही कार्यक्रमों की रूपरेखा को राज्य के नीति निर्देशक तत्व में देखा जा सकता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना ने अपने सभी नागरिकों सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय को सुरक्षित करने के लिए भारत में संप्रभुता, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतान्त्रिक गणराज्य को रखा है। राज्य के नीति-निर्देशक तत्व के माध्यम से सामाजिक और आर्थिक न्याय की स्थापना हेतु राज्यों को मौजूदा सामाजिक आर्थिक असमानता को दूर करने का निर्देश दिया गया है। इसी संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद 46 को देखना भी महत्वपूर्ण होगा जोकि विशेष रूप से कमजोर वर्ग को और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के प्रति राज्य के दायित्व को सुनिश्चित करने का प्रयास करता है और राज्य से अपेक्षा करता है कि राज्य इनकी विशेष देखभाल के साथ शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देगा और सामाजिक अन्याय के सभी प्रकार के शोषण से इनकी रक्षा करेगा।

नीति निर्देशक तत्वों के माध्यम से विभिन्न भूमि पुनर्वितरण और आवंटन (Land Distribution and Allocation) कार्यक्रम शुरू किए गए। वास्तव में इस संबंध में सरकार इतनी ज्यादा उत्साहित थी कि भारतीय गणराज्य के पहले पांच वर्षों में ही कई बार भूमि सुधार कानून पारित किए गए। बहुत ज्यादा भूमि सुधार कानूनों में बदलाव के चलते देश के शीर्ष अदालतों में मुकदमों की बाढ़ सी आ गई हालांकि सरकार भूमि सुधारों को प्रभावित करने के लिए इतनी उत्सुक थी कि संपत्ति के अधिकार को अनुच्छेद 31 के तहत प्रदान किया गया और इसे मौलिक अधिकारों की श्रेणी से बाहर करते हुए केवल एक कानूनी अधिकार (अनुछेद 300।) का दर्जा दिया गया और मुकदमेबाजी से बचने के लिए इसे भारतीय संविधान के अनुसूची 9 में शामिल किया गया। आज सकारात्मक कार्यवाही के संदर्भ में अनुसूची 9 में शामिल विषयों की भी न्यायपालिका द्वारा न्यायिक समीक्षा की जा सकती है और यह नरम सकारात्मक कार्यवाही के विस्तार का एक तरीका कहा जा सकता है।

जब सरकारी नौकरियों, उच्च शिक्षा के अवसरों, आवासीय सुविधाओं, इत्यादि में विभिन्न पिछड़े वर्गों के लिए कुछ स्थान संरक्षित कर दिए जाते हैं और उन्हें आवश्यक योग्यताओं, आयु-सीमा इत्यादि में छूट दी जाती है तो इससे सामान्य श्रेणी के प्रतियोगियों को शिकायत हो सकती है, जैसे वे अधिक योग्य होते हुए भी ऐसे दुर्लभ अवसरों से वंचित हो जाते हैं जबकि आरक्षित श्रेणी में उनमें कम योग्यता पाने वाले लोगों का चयन हो जाता है। विपरीत भेदभाव व संरक्षणमूलक भेदभाव के विरोधी यह तर्क देते हैं कि यदि समानता का अर्थ 'भेदभाव का निराकरण' है तो समानता के नाम पर पुराने भेदभाव को उलटी दिशा में मोड़ कर कायम रखने का क्या औचित्य है? वंचित वर्गों के साथ अतीत में जो अतार्किक या अमानवीय भेदभाव बरता गया था, क्या उसकी क्षतिपूर्ति के लिए आज उसी तरह के अतार्किक आधार पर अन्य समूहों के साथ विपरीत भेदभाव किया जाना उचित होगा? यहां पर यह बात जानना आवश्यक है कि भारत में विपरीत भेदभाव का मुद्दा इतने ऊंचे स्वर में नहीं उठाया जाता जैसा कि अमेरिका में उठाया जाता है।

वंचित वर्गों के हित में 'संरक्षणमूलक भेदभाव' या 'सकारात्मक कार्यवाही' के पक्ष में अनेक दलीलें दी जाती हैं जैसेः–

(क) आज के वंचित वर्गों के साथ अतीत में जो अमानवीय और अतार्किक भेदभाव बरता गया, वहीं इनकी वर्तमान दुर्दशा के लिए उत्तरदायी है। इसलिए इनको मुख्यधारा और विकास से पुनः जोड़ने के लिए क्षतिपूरक न्याय की दृष्टि से उचित प्रबंध किए जाना चाहिए।

(ख) कुछ लोग यह तर्क देते हैं, कि यदि पिछड़े वर्गों को उन्नत वर्गों के साथ मुक्त प्रतिस्पर्धा का सामना करने को कहा जाएगा तो उच्च पदों पर इनके चयन की संभावना नगण्य रहेगी। इससे समाज के वर्ग-संरचना को समझने में कोई

उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हो पाएगा। इसके विपरीत, उनके साथ वरीयता का बर्ताव होने पर जब उच्च पदों पर उनका चयन होने लगेगा। तो धीरे-धीरे समाज का ढांचा बदलने लगेगा इससे ना केवल इन वर्गों का आत्मविश्वास बढ़ेगा बल्कि पूरा समाज, समानता की और बढ़ेगा।

(ग) कुछ लोग यह तर्क देते हैं कि समाज में उन्नति के अवसर इतने दुर्लभ है कि इनका आवंटन करते समय योग्यता के साथ-साथ आवश्यकता को भी ध्यान में रखना चाहिए। दूसरे शब्दों में योग्यता के अनुसार आवंटन (Distribution According to Merit) के साथ-साथ आवश्यकता के अनुसार आवंटन (Distribution According to Need) को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। वंचित वर्गों की आवश्यकता इतनी प्रबल है कि इस वर्ग के सदस्यों को आवश्यक योग्यता के आधार पर कुछ अंको की छूट दी जा सकती है। पिछड़े वर्ग के परिवार के एक सदस्य को उन्नति का अवसर मिलने पर वह पूरे परिवार को अच्छी शिक्षा, रहन-सहन का अच्छा स्तर और आत्मसम्मान प्रदान करने में सहायक होगा। इससे सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को बल मिलेगा।

वर्ष 1992 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक निर्णय दिया कि अन्य पिछड़े वर्गों में आरक्षण का लाभ समाज के अपेक्षाकृत उन्नत स्तरों अर्थात मलाईदार परत (Creamy Layer) को प्राप्त नहीं होगा। यह शर्त अनुसूचित जाति (Schedule Caste) और अनुसूचित जनजाति (Schedule Tribe) के उम्मीदवारों पर लागू नहीं होती। इसका मुख्य कारण यह है, कि इन वर्गों के साथ विशेषकर अनुसूचित जाति के साथ जो सामाजिक भेदभाव बरता गया या बरता जाता है तो वह समाज में जाति के आधार पर होता है ना कि आर्थिक आधार पर। भारत में वर्ष 2019 में भारत की सरकार ने संविधान (124वां संविधान संशोधन) विधायक 2019 को लागू किया, जिससे पूर्ववर्ती अनारक्षित वर्ग या सामान्य श्रेणी के वर्ग के लिए 10 प्रतिशत अतिरिक्त कोटा प्रदान किया गया है। भारत में आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों (Economic Weaker Section) सामान्य वर्ग से संबंधित लोगों की उपश्रेणी है, जिनकी वार्षिक आय 8 लाख तक है और जो किसी भी आरक्षित वर्ग जैसे अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग के केंद्रीय सूची से संबंधित नहीं है। आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (EWS) और आर्थिक रूप से पिछड़ा वर्ग (Economic Backward Section) और गहन आर्थिक रूप से पिछड़ा वर्ग (MEBC: Most Economic Backward Class) की परिभाषा अलग-अलग राज्यों के साथ-साथ संस्थाओं में भी भिन्न-भिन्न है।

सकारात्मक कार्यवाही से एक जुड़ा हुआ मुद्दा यह भी है कि इसको राजनीतिक लाभ का साधन बनाया जा रहा है वह संविधान निर्माताओं ने मूलतः 1950 में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के संरक्षण की विशेष व्यवस्था को 10 वर्ष के लिए तय किया था और उन्हें यह आशा थी कि इस अवधि में इन्हें इतना सशक्त बना दिया जाएगा

कि इसके बाद उन्हें विशेष संरक्षण की जरूरत नहीं रहेगी। संविधान में प्रत्येक 10 वर्ष के उपरांत पर इसकी समीक्षा की बात की गई है। परंतु आने वाली पीढ़ियों ने इनकी दिशा में आवश्यक सुधार लाने की उतनी चिंता नहीं की बल्कि राजनीतिक दलों द्वारा इन्हें वोट बैंक के रूप में आज भी इस्तेमाल किया जाता है और 10-10 वर्ष के लिए यह अवधि बढ़ाई जाती रही है।

हालांकि जातियों का राजनीतिकरण भारत में 80 के दशक से ही प्रारंभ हो गया था। दूसरी तरफ मंडल कमीशन ने सभी राज्यों, और केंद्र सरकार के अन्य पिछड़ा वर्गों के लिए नौकरियों और शिक्षण संस्थानों में आरक्षण की सिफारिश की। मध्यप्रदेश का विरोध भी किया लेकिन जातिगत गोलबंदी अपने विस्तृत आकार की वजह से इस विरोध से ऊपर उठ चुकी थी और मेरा यह अलग मामला है कि इस प्रकार की पहल में जो राजनीतिक प्रतिनिधित्व निकल कर आया इसमें कई प्रकार के अंतर्विरोध भी शामिल है जिसे योगेंद्र यादव मिथ्या आभास की संकल्पना देते हैं। जहां का इस बात को स्वीकार करते हैं कि अन्य पिछड़ा वर्गो में यादव और कुर्मी यों का ही प्रतिनिधित्व पड़ रहा है, अन्य जातियों को आगे आने का पर्याप्त मौका नहीं मिल रहा है।

आरक्षण को लेकर द्वंद्व एक बार पुनः समानता के सिद्धांत तथा जाति और वर्ग के बीच की पारस्परिक क्रिया का पूरा विश्लेषण करने की आवश्यकता है। नीरा चंडोक ने अपने एक लेख *'थ्री मिथ्स अबआउट रिजर्वेशन'* में आरक्षण की बहस को पुनः विश्लेषण किया और इससे जुड़े तीन मिथक का जिक्र उन्होंने किया है। *पहला* मिथक, कि आरक्षण से समानता के सिद्धांत का उल्लंघन होता है। इसके पीछे तर्क यह दिया जाता है कि धर्म, जाति, वर्ग, और लिंग को दरकिनार करके सभी की निर्णय निर्माण प्रक्रिया में समान भूमिका होनी चाहिए। आरक्षण द्वारा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया गया। लेकिन स्थितिवश यह बहुत निम्न स्तर तक नहीं हो पाया। जैसे कि भूमिहीन दलित महिलाएं तीन प्रकार से वंचित हैं। ये सबी दलित महिलाएँ जाति, वर्ग, और लिंग तीन प्रकार के भेदभाव से एक-साथ ग्रसित हैं। *दूसरा* मिथक, भारत में समानता की बहस पर केंद्रित है जो संरक्षणात्मक-भेदभाव तथा सकारात्मक कार्यवाही में अंतर की उपेक्षा करता है। जैसे अमेरिका में सकारात्मक कार्यों में ना तो कोटा निर्धारित है ना ही योग्यता। भारत में आरक्षण को लेकर सिद्धांत और इसके अनुपालन में कुछ व्यावहारिक समस्याएं देखी जा सकती है। *तीसरा* मिथक, आरक्षण विविधता के प्रति सम्मान की भावना से नहीं किया गया है। किस आधार पर लोगों को एक दूसरे के प्रति असहिष्णु बना देता है।

निष्कर्ष

यह कहा जा सकता है कि समानता का अभिप्राय, एक जैसे लोगों के साथ एक जैसा व्यवहार करना होता है और यदि सरकार कोई भी ऐसी सार्वजनिक नीति का निर्माण करती है जिसमें कुछ वर्गों को संरक्षण प्रदान करते हुए विकास की मुख्यधारा

में बराबरी का अधिकार देने की कोशिश की जाती है और उसका यदि कोई तर्कसंगत आधार होता है तो इसे स्वीकार किया जा सकता है। जॉन रॉल्स ने अपने न्याय के सिद्धांत में इसे भेदमूलक न्याय (Difference Principal) की संज्ञा दी है जिसे हम सकारात्मक कार्यवाही, संरक्षणमूलक भेदभाव या भेदमूलक न्याय भी कह सकते हैं।

सन्दर्भ

1. आचार्य, अशोक (2008), ''अफरमेटीव एक्शन'' इन राजीव भार्गव, व अशोक आचार्य, (संपा) *पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पीजन्स, 2008।
2. अब्बास, होइयेदा, व कुमार, रंजन कुमार, पॉलिटिक्ल थ्योरी, नई दिल्लीः पीयरसन, 2009।
3. रॉल्स, जॉन, *ए थ्योरी ऑफ जस्टिस,* हार्वर्ड : हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1971।
4. विनोद, एम. जे और मीना देशपांडे, कंटमपरेरी पॉलिटिक्ल थ्योरी, नई दिल्लीः पी.एच. आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, 2013।

सन्दर्भ सूची

1. रितेश भारद्वाज, राजनीतिक सिद्धांत का परिचय, दी पोलिटिक और विराट बुक हाउस, 2021.
2. वही
3. Oppenheimer, David Benjamin, Distinguishing Five Models of Affirmative Action, Berkeley Journal of Gender, Law & Justice, Vol. 4, Issue 1, 1988- DOI: 10-15779/Z38Z00P.
4. वही
5. आचार्य, अशोक (2008), ''अफरमेटीव एक्शन'' इन राजीव भार्गव, व अशोक आचार्य, (संपा) *पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पीजन्स, 2008।
6. वही
7. V.N. Shukla, Constitutional of India, in M. P. Singh Ed, 13th ed., Eastern Book Company, 2017.
8. आचार्य, अशोक (2008), ''अफरमेटीव एक्शन'' इन राजीव भार्गव, व अशोक आचार्य, (संपा) *पॉलिटिक्ल थ्योरी,* नई दिल्लीः पीजन्स, 2008।
9. संपत्ति के अधिकार को मूल रूप से भारत में एक मौलिक अधिकार माना जाता था, लेकिन भारतीय संविधान के 44 वें संशोधन द्वारा, अनुच्छेद 300 (ए) के प्रावधान के तहत, इसे केवल एक संवैधानिक अधिकार तक कम कर दिया गया था।
10. Neera Chandhoke, Three Myths about Reservations, Economic and Political Weekly, January 2006, DOI:10.2307/4418313.